राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 13411/2011

बहादुर सिंह पुत्र श्री हाल राम, (मृत्यु के बाद से)- विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से

1/1 श्रीमती पुष्पा देवी पत्नी स्वर्गीय श्री बहादुर सिंह

1/2 श्रीमती रिंकू पुत्री स्वर्गीय श्री बहादुर सिंह

1/3 श्रीमती प्रिया पुत्री स्वर्गीय श्री बहादुर सिंह, उम्र 20 साल

1/4 नवनीत सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री बहादुर सिंह, उम्र लगभग 16 वर्ष, को माता पुष्पा देवी के माध्यम से।

1/5 विराट सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री बहादुर सिंह, उम्र लगभग 14 वर्ष, माता पुष्पा देवी के माध्यम से।

सभी ग्राम व पोस्ट पोल्यारा, तहसील देवली, जिला-टोंक, राजस्थान के निवासी हैं।

----याचिकाकर्तागण

बनाम

1. राजस्थान सरकार-पुलिस महानिरीक्षक, अजमेर रेंज, अजमेर के माध्यम से।

2. पुलिस अधीक्षक, टोंक।

----प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्तागण की ओर से	:	श्री विनोद कुमार गुप्ता श्री अमित कुमार गुप्ता
प्रत्यर्थीगण की ओर से	:	श्री पी.एस. नरुका के लिए श्री रूपिन काला, जी.सी.

माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

आदेश सुरक्षित करने की तिथि	:	19/04/2023
आदेश उच्चारित करने की तिथि	:	03/05/2023

रिपोर्टेबल

निर्णय

(1) इस याचिका में चुनौती दिनांक 11.12.2003 के आदेश को है जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई है। दिनांक 28.8.2004 के आदेश द्वारा अपील भी खारिज कर दी गई है।

(2) याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत तथ्य संक्षेप में यह है कि वह पुलिस स्टेशन सदर, टोंक में कांस्टेबल के रूप में तैनात था और 28.12.2001 को वह ड्यूटी से अनुपस्थित रहा। 18.1.2002 को उसने चार अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर बजरंग के पुत्र गोपाल का अपहरण कर लिया और उसके साथ मारपीट की और स्टांप पेपर पर उसके हस्ताक्षर ले लिए। उपरोक्त कृत्य के लिए उसके विरूद्ध पुलिस थाना टोडारायसिंह (टोंक) में अपराध संख्या 14/2002 धारा 365, 342, 327, 323 एवं 120-बी आईपीसी के तहत दर्ज किया गया और याचिकाकर्ता को 15.3.2002 को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1958 (संक्षेप में "सीसीए नियम") के नियम 16 के तहत अतिरिक्त आरोप के साथ आरोप-पत्र जारी किया गया था कि याचिकाकर्ता के ऐसे कृत्य ने जनता के सम्मान में पुलिस की छवि खराब की है।

(3) याचिकाकर्ता ने आरोप-पत्र का उत्तर प्रस्तुत किया और उसके बाद घरेलू जांच की गई और निम्नलिखित गवाहों के बयान दर्ज किए गए:-

(i) राम सिंह, थाना प्रभारी, पुलिस थाना टोडारायसिंह, जिला टोंक

(ii) रतन लाल, कांस्टेबल
(iii) बद्री लाल, कांस्टेबल
(iv) मुकेश चौधरी
(v) सीताराम
(vi) चौथमल
(vii) शंकरलाल
(viii) गोपाल लाल (एफआईआर में शिकायतकर्ता)

और तेरह दस्तावेज़ प्रदर्शित किए गए और याचिकाकर्ता ने इन सभी गवाहों से जिरह की। बचाव में डीडब्ल्यू-1 कुमारी सरिता के बयान दर्ज किये गये। विस्तृत जांच करने के बाद, याचिकाकर्ता के विरूद्ध आरोप साबित पाए गए और दिनांक 11.12.2003 के आदेश के तहत उसे सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करते हुए याचिकाकर्ता के विरूद्ध सजा आदेश पारित किया गया। याचिकाकर्ता ने सीसीए नियमों के नियम 23 के तहत अपील दायर करके अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष इस आदेश को असफल रूप से चुनौती दी और इसे भी खारिज कर दिया गया।

(4) आक्षेपित आदेशों से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष यह रिट याचिका दायर की है।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विभागीय आरोप-पत्र और

आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता के विरूद्ध लगाए गए आरोप समान और समान थे, और आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता को धारा 365, 342, 327 के तहत सभी आरोपों से बरी कर दिया गया है। विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी मामले), टोंक की न्यायालय द्वारा सत्र प्रकरण संख्या 63/2005 में दिनांक 24.10.2005 के निर्णय के तहत धारा 323, 324 और 120-बी आईपीसी। अधिवक्ता का कहना है कि गवाह गोपाल लाल से विभागीय जांच और आपराधिक मुकदमे में पूछताछ की गई थी। विभागीय जांच और मुकदमे दोनों में आरोप काफी हद तक एक जैसे थे। याचिकाकर्ता को आपराधिक मुकदमे से बरी कर दिया गया है। इसलिए, उन्हीं आरोपों पर अनुशासनात्मक जांच में याचिकाकर्ता के विरूद्ध दर्ज किए गए अपराध के निष्कर्ष को रद्द कर दिया जाना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्कों के समर्थन में कैप्टन एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड (1999) 3 एससीसी 679, जी.एम. टैंक बनाम गुजरात सरकार (2006) 5 एससीसी 446 मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों और फूल सिंह बनाम राजस्थान सरकार 2015 (1) डब्ल्यूएलसी (राजस्थान) 394 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया।

(5.1) अंत में, अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को "सम्मानजनक बरी" के निर्णय से बरी कर दिया गया है और उसे आपराधिक मुकदमे में "पूरी तरह से दोषमुक्त" कर दिया गया है, इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय के एस. भास्कर रेड्डी बनाम पुलिस अधीक्षक (2015) 2 एससीसी 365 के मामले में निर्णय के आलोक में विवादित आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा कोई अन्य मुद्दा नहीं उठाया गया है।

(6) इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया है और प्रस्तुत किया है कि आपराधिक मुकदमे में याचिकाकर्ता के विरूद्ध आरोप बिल्कुल वैसे नहीं थे जैसे वे विभागीय जांच में थे। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विभागीय जांच में, कुल आठ गवाहों की जांच की गई और याचिकाकर्ता को उचित अवसर देने के बाद, याचिकाकर्ता के विरूद्ध आरोप साबित पाए गए, जबकि आपराधिक मुकदमे में केवल एक गवाह, गोपाल लाल की जांच की गई और उसे दोषी ठहराया गया और शत्रुतापूर्ण घोषित किया गया और किसी अन्य गवाह से पूछताछ नहीं की गई और याचिकाकर्ता को बरी करना "सम्मानजनक बरी" नहीं था। अधिवक्ता ने कहा कि आपराधिक मामले में बरी होने से कोई व्यक्ति सेवा में स्वत: बहाली का पात्र नहीं

हो जाता। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने उच्चतम न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:-

(i) राजस्थान सरकार बनाम फूल सिंह AIR 2022 SC 4176

(ii) कर्नाटक सरकार बनाम उमेश (2022) 6 एससीसी 563

(iii) भारत संघ बनाम मनगोबिंदा सामंतराय 2022 लाइव लॉ (एससी) 244

(iv) उप महाप्रबंधक (अपीलीय प्राधिकारी) बनाम अजय कुमार श्रीवास्तव (2021) 2 एससीसी 612

(v) कर्नाटक सरकार बनाम एन. गंगाराज (2020) 3 एससीसी 423

(vi) अजय कुमार सिंह बनाम फ्लैग ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ (2016) 9 एससीसी 179

(vii) बलजिंदर पाल कौर बनाम पंजाब सरकार (2016) 1 एससीसी 671

(viii) डिविजनल कंट्रोलर, केएसआरटीसी बनाम एम.जी. विट्ठल राव (2012) एससीसी 442

अधिवक्ता का कहना है कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

(7) बार में दी गई दलीलों को सुना और उन पर विचार किया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

(8) पीडब्लू-4 मुकेश चौधरी, पीडब्लू-5 सीताराम और पीडब्लू-7 शंकरलाल ने याचिकाकर्ता द्वारा पीडब्लू-8 गोपाल लाल के साथ किए गए अपराध के बारे में स्पष्ट रूप से बताया है। इन तीनों गवाहों ने घरेलू पूछताछ के दौरान अपने बयानों में स्पष्ट रूप से कहा है कि याचिकाकर्ता ने पीडब्लू-8 गोपाल लाल का जीप में अपहरण कर लिया था। गवाह पीडब्लू-8 गोपाल ने विशेष रूप से कहा है कि उसे याचिकाकर्ता द्वारा जबरदस्ती जीप में ले जाया गया था और उसे एक कमरे में हिरासत में लिया गया था और स्टाम्प पेपर पर उसके हस्ताक्षर जबरदस्ती लिए गए थे।

(9) पीडब्लू-1 राम सिंह, स्टेशन हाउस ऑफिसर (संक्षेप में "एसएचओ") ने याचिकाकर्ता के विरूद्ध धारा 365, 342, 327 और 323 आईपीसी के तहत अपराध के लिए एफआईआर संख्या 14/2002 दर्ज की और उसे गिरफ्तार कर लिया, और याचिकाकर्ता दिनांक 01.07.2019 से न्यायिक हिरासत में 15.3.2002 से 26.3.2002 वहीं रहा। बाकी गवाहों

पीडब्लू-2 रतनलाल, पीडब्लू-3 बद्रीलाल और पीडब्लू-6 चौथमल ने भी विभागीय जांच में याचिकाकर्ता के विरूद्ध गवाही दी है। इस पूछताछ में कुल तेरह दस्तावेज़ प्रदर्शित किए गए और याचिकाकर्ता के बचाव साक्ष्य पर विचार करने के बाद, दोनों आरोप सं. 1 और 2 उसके विरूद्ध साबित पाए गए और यह पाया गया कि याचिकाकर्ता का ऐसा कृत्य अनुचित था और यह उसके हिस्से पर कदाचार था और इससे आम जनता के सम्मान में पुलिस विभाग की छवि खराब हुई। इस घरेलू जांच के आधार पर, विवादित आदेश पारित किया गया और उन्हें सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति दे दी गई। अपीलीय प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील को खारिज करते हुए ठोस निष्कर्ष दर्ज किए।

(10) अब इस न्यायालय के विचाराधीन प्रश्न यह है कि "क्या आपराधिक मामले में दोषमुक्ति के निर्णय के आधार पर कोई व्यक्ति सेवा में स्वतः बहाली का पात्र है या नहीं?"

(10.1) अजीत कुमार नाग बनाम इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड (2005) 7 एससीसी 764 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना है कि आपराधिक न्यायालय द्वारा बरी किए जाने से नियोक्ता को लागू नियमों के अनुसार अपनी शक्ति का प्रयोग करने से वंचित नहीं किया जाएगा। किसी आपराधिक मामले में बरी होने से कोई व्यक्ति स्वतः बहाली का पात्र नहीं हो जाता।

(10.2) भारत संघ बनाम बिहारी लाल सिधाना (1997) 4 एससीसी 385 में, इसे पैरा 5 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:-

> "5. यह सच है कि प्रत्यर्थी को आपराधिक न्यायालय ने बरी कर दिया था, लेकिन बरी होने से उसे स्वतः रूप से सेवा में बहाल होने का अधिकार नहीं मिल जाता है। यह अभी भी सक्षम प्राधिकारी के लिए निर्णय लेने के लिए खुला होगा कि दोषी सरकारी सेवक को सेवा में लिया जा सकता है या केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियमों के तहत या अस्थायी सेवा नियमों के तहत अनुशासनात्मक कार्रवाई की जानी चाहिए। माना जाता है कि प्रत्यर्थी निलंबन में रखे जाने से पहले एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी के रूप में काम कर रहा था। समाप्ति आदेश ने इस तथ्य का संकेत दिया कि वह तब तक निलंबित था। यह केवल यह बताने का एक तरीका है कि जब आदेश पारित हुआ तो वह निलंबित था, लेकिन इससे कोई कलंक नहीं लगता। सरकारी कर्मचारी के बरी हो जाने मात्र से सरकारी कर्मचारी स्वतः ही बहाली का पात्र नहीं हो जाता। जैसा कि पहले कहा गया है, यह निर्णय लेने के लिए उपयुक्त सक्षम प्राधिकारी के लिए खुला होगा कि क्या आचरण की जांच बहाली का निर्देश देने से पहले की जानी चाहिए या कानून के अनुसार उचित कार्रवाई की जानी चाहिए, यदि अन्यथा उपलब्ध हो। चूँकि प्रत्यर्थी केवल एक अस्थायी सरकारी सेवक है, नियमों के नियम 5(1) के तहत शक्ति उपलब्ध है, यह सक्षम प्राधिकारी के लिए हमेशा खुला है कि वह उक्त शक्ति का उपयोग कर सके और जांच करने के बजाय सार्वजनिक धन के गबन के आरोपी सरकारी कर्मचारी को सेवा में जारी रखने के लिए कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त कर सके या उनके लिए बहाली सार्वजनिक धन के दुरुपयोग में दण्ड से मुक्ति पाने का एक चार्टर होगा।

(11) यदि कोई कर्मचारी बरी हो गया है, तभी वह बहाली का दावा कर सकता है। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पुलिस महानिरीक्षक बनाम एस समुथिराम (2013) 1 एससीसी 598 के मामले में पैरा 24 में "सम्मानजनक बरी" अभिव्यक्ति के अर्थ पर विस्तार से चर्चा की गई थी, जो इस प्रकार है:-

> "24. आरबीआई बनाम भोपाल सिंह पांचाल मामले में इस न्यायालय के समक्ष "सम्मानजनक बरी" अभिव्यक्ति का अर्थ विचार के लिए आया था। उस मामले में, इस न्यायालय ने अनुशासनात्मक कार्यवाही पर आपराधिक न्यायालय द्वारा सम्मानजनक बरी किए जाने से संबंधित विनियम 46(4) के प्रभाव पर विचार किया है। उस संदर्भ में, इस न्यायालय ने माना कि मात्र दोषमुक्ति किसी कर्मचारी को सेवा में बहाल करने का अधिकार नहीं देती है, यह माना गया कि दोषमुक्ति सम्मानजनक होनी चाहिए। "सम्मानजनक दोषमुक्ति", "दोषमुक्ति", "पूरी तरह से दोषमुक्ति" जैसे शब्द आपराधिक प्रक्रिया संहिता या दंड संहिता के लिए अज्ञात हैं, जो न्यायिक घोषणाओं द्वारा गढ़े गए हैं। यह स्पष्ट रूप से परिभाषित करना कठिन है कि "सम्मानपूर्वक बरी किये जाने" की अभिव्यक्ति का क्या अर्थ है। जब अभियोजन पक्ष के सबूतों पर पूरी तरह विचार करने के बाद आरोपी को बरी कर दिया जाता है और अभियोजन पक्ष आरोपी के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है, तो संभवतः यह कहा जा सकता है कि आरोपी को सम्मानपूर्वक बरी कर दिया गया है।

(11.1) इस निर्णय को पढ़ने से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि जब किसी आरोपी को अभियोजन साक्ष्य पर पूरी तरह विचार करने के बाद बरी कर दिया जाता है, और अभियोजन पक्ष किसी आरोपी के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने में बुरी तरह विफल रहा, तो आरोपी को सम्मानपूर्वक बरी कर दिया गया।

(12) विशेष न्यायाधीश (एससी/एसटी मामले), टोंक द्वारा पारित निर्णय दिनांक 24.10.2005 के अवलोकन से संकेत मिलता है कि अभियोजन पक्ष के मुख्य गवाह, पीडब्लू-1 गोपाल ने आरोपी व्यक्तियों के साथ समझौता कर लिया और वह मुकर गया और याचिकाकर्ता द्वारा दर्ज कराई गई एफआईआर में उसके विरूद्ध लगाए गए आरोपों का समर्थन नहीं किया। अभियोजन पक्ष द्वारा किसी अन्य गवाह से पूछताछ नहीं की गई, इसलिए याचिकाकर्ता को बरी कर दिया गया। अभियोजन पक्ष के साक्ष्यों पर पूर्ण विचार करने के बाद याचिकाकर्ता को ट्रायल कोर्ट द्वारा बरी नहीं किया गया है, बल्कि याचिकाकर्ता को समझौते के आधार पर बरी किया गया है, क्योंकि गवाह गोपाल ने आरोपी व्यक्तियों के साथ समझौता कर लिया था और वह मुकर गया था। इसलिए, याचिकाकर्ता को बरी किए जाने को "सम्मानजनक बरी" नहीं माना जा सकता।

(13) दोषमुक्ति के निर्णय के बाद बहाली पर विचार करने का प्रश्न तभी उठता है जब सेवा से बर्खास्तगी भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) में निहित प्रावधानों के

मद्देनजर आपराधिक न्यायालय द्वारा सजा पर आधारित थी। ऐसे मामले में जहां जांच आपराधिक कार्यवाही से स्वतंत्र रूप से की गई है, आपराधिक मामले में बरी होने से कोई मदद नहीं मिलती है। कानून का यह सुस्थापित प्रस्ताव है कि भले ही किसी व्यक्ति को आपराधिक न्यायालय द्वारा बरी कर दिया गया हो, घरेलू जांच की जा सकती है, इसका कारण यह है कि घरेलू जांच में आवश्यक साक्ष्य के मानक और आपराधिक मामले में, पूरी तरह से अलग हैं। एक आपराधिक मामले में, उचित संदेह से परे साक्ष्य के मानक की आवश्यकता होती है, जबकि घरेलू जांच में यह संभावनाओं की प्रबलता है जो लागू किए जाने वाले परीक्षण का गठन करती है।

(14) माननीय उच्चतम न्यायालय ने डिविजनल कंट्रोलर, केएसआरटीसी (सुप्रा.) के मामले में पैरा 24 में इस बिंदु को निम्नानुसार देखा है:-

> "24. इस प्रकार, स्थापित विधिक प्रस्ताव के बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि चूंकि दोनों कार्यवाही में साक्ष्य के मानक काफी अलग हैं, और बर्खास्तगी केवल एक आपराधिक मामले में कर्मचारी की दोषसिद्धि पर आधारित नहीं है, आपराधिक मामले में कर्मचारी का बरी होना मामला विभागीय कार्यवाही के प्रभाव को हटाने का आधार नहीं हो सकता न ही विभाग की ऐसी कार्रवाई को दोहरा ख़तरा कहा जा सकता है। कैप्टन एम. पॉल एंथोनी [(1999) 3 एससीसी 679] में इस न्यायालय का निर्णय सार्वभौमिक अनुप्रयोग का कानून निर्धारित नहीं करता है। किसी व्यक्तिगत मामले में शामिल तथ्य, आरोप और सबूतों की प्रकृति आदि यह निर्धारित करेंगे कि बरी करने के निर्णय का घरेलू जांच में दर्ज निष्कर्षों पर कोई असर होगा या नहीं।"

(15) अनुशासनात्मक जांच को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत उन सिद्धांतों से भिन्न होते हैं जो आपराधिक मुकदमे पर लागू होते हैं। आपराधिक कानून के तहत दंडनीय अपराध के लिए अभियोजन में, उचित संदेह से परे अपराध की सामग्री को स्थापित करने का भार अभियोजन पक्ष पर होता है। अभियुक्त निर्दोषता का अनुमान लगाने का पात्र है। नियोक्ता द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही का उद्देश्य किसी कर्मचारी द्वारा कदाचार के आरोप की जांच करना है जिसके परिणामस्वरूप रोजगार के संबंध को नियंत्रित करने वाले सेवा नियमों का उल्लंघन होता है। एक आपराधिक अभियोजन के विपरीत जहां आरोप को उचित संदेह से परे स्थापित किया जाना है, एक अनुशासनात्मक कार्यवाही में, कदाचार का आरोप संभावनाओं की प्रधानता पर स्थापित किया जाना है। साक्ष्य के नियम जो आपराधिक मुकदमे पर लागू होते हैं वे उन नियमों से भिन्न होते हैं जो अनुशासनात्मक जांच को नियंत्रित करते हैं। किसी आपराधिक मामले में आरोपी को बरी करने से नियोक्ता को अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में आगे बढ़ने से रोका नहीं जाता है।

(16) कर्नाटक पावर ट्रांसमिशन कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाम सी.नागाराजू (2019) 10

एससीसी 367 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 13 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

> "13. याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से की गई दलीलों पर विचार करने के बाद, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय द्वारा बर्खास्तगी के आदेश में हस्तक्षेप अनुचित था। यह स्थापित कानून है कि आपराधिक न्यायालय द्वारा बरी किए जाने से अपराधी अधिकारी के विरूद्ध विभागीय जांच नहीं हो पाती है। यदि विभागीय जांच में पेश किया गया साक्ष्य आपराधिक मुकदमे के दौरान पेश किए गए साक्ष्य से भिन्न है तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी आपराधिक न्यायालय के निर्णय से बाध्य नहीं है। विभागीय जांच का उद्देश्य यह पता लगाना है कि क्या अपराधी आचरण नियमों के तहत कदाचार का दोषी है, यह निर्धारित करने के लिए कि क्या उसे सेवा में जारी रखा जाना चाहिए। विभागीय जांच में साक्ष्य का मानक पूरी तरह से साक्ष्य के नियमों पर आधारित नहीं है। बर्खास्तगी का आदेश, जो अनुशासनात्मक कार्यवाही में जांच अधिकारी के समक्ष साक्ष्य पर आधारित है, जो कि आपराधिक न्यायालय में उपलब्ध साक्ष्य से अलग है, उचित है और इसमें उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

(17) कर्नाटक सरकार बनाम उमेश (2022) 6 एससीसी 563 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना है कि न्यायिक समीक्षा में, न्यायालय अनुशासनात्मक द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों पर अपीलीय मंच के रूप में कार्य नहीं करती है। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस निर्णय में पैरा 22 में कुछ सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है, जो इस प्रकार है:-

> "22. न्यायिक समीक्षा के अभ्यास में, न्यायालय अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निष्कर्षों पर अपीलीय मंच के रूप में कार्य नहीं करता है। न्यायालय उन साक्ष्यों की दोबारा सराहना नहीं करती जिनके आधार पर अनुशासनात्मक जांच के दौरान कदाचार का निष्कर्ष निकाला गया है। न्यायिक समीक्षा के अभ्यास में न्यायालय को यह निर्धारित करने के लिए अपनी समीक्षा को प्रतिबंधित करना चाहिए कि क्या:
>
> (i) प्राकृतिक न्याय के नियमों का अनुपालन किया गया है;
> (ii) कदाचार का पता कुछ सबूतों पर आधारित है;
> (iii) अनुशासनात्मक जांच के संचालन को नियंत्रित करने वाले वैधानिक नियमों का पालन किया गया है; और
> (iv) क्या अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निष्कर्ष विकृति से ग्रस्त हैं; और
> (v) जुर्माना सिद्ध कदाचार के अनुपात से अधिक है।"

(18) हालाँकि, उपरोक्त में से कोई भी परीक्षण वर्तमान मामले में नहीं हुआ है, जिसके लिए इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है क्योंकि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने इस मामले पर बहस करते समय उपरोक्त में से कोई भी मुद्दा नहीं उठाया है। उन्होंने याचिकाकर्ता को बरी करने के निर्णय के आधार पर ही अपनी दलीलों को हस्तक्षेप के दायरे तक सीमित रखा है। याचिकाकर्ता द्वारा उद्धृत और विश्वसनीय निर्णय वर्तमान मामले में लागू नहीं होते हैं।

(19) माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय के आलोक में, विभागीय जांच की

न्यायिक समीक्षा विभिन्न सिद्धांतों पर आधारित है और याचिकाकर्ता को आपराधिक मामले से बरी करने से याचिकाकर्ता को दोषमुक्त नहीं किया जाएगा।

(20) इस न्यायालय की सुविचारित राय में निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई दोष नहीं है। विभाग ने यह दिखाने के लिए विश्वसनीय साक्ष्य पेश किए हैं कि याचिकाकर्ता कदाचार का दोषी था। जांच अधिकारी के निष्कर्ष न तो विकृत हैं और न ही 'कोई साक्ष्य नहीं' पर आधारित हैं। अनुशासनात्मक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी के विवादित आदेश कानून के अनुसार हैं। याचिकाकर्ता के कदाचार को देखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि सज़ा असंगत और चौंकाने वाली है, जिसमें किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

(21) ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, इस न्यायालय को आक्षेपित आदेशों में कोई त्रुटि नहीं मिली। रिट याचिका को लंबित आवेदन (यदि कोई हो) के साथ खारिज कर दिया जाता है।

(22) लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

(अनूप कुमार ढांड), न्यायमूर्ति

db/

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल**,** द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।
अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।